Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 8, pp 790-792, August, 2026

'मछुआरे' उपन्यास में मछुआरा समाज का संघर्ष : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

पिंकी चौहान

साहित्य अध्येयता
संपर्क: 9319591496

सार :

मलयालम के प्रसिद्ध साहित्यकार तकषी शिवशंकर पिल्लै का उपन्यास 'मछुआरे' केवल एक व्यक्ति अथवा एक परिवार की कथा नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण मछुआरा समाज के जीवन, संघर्ष, मान्यताओं, रूढ़ियों और सामाजिक अंतर्विरोधों का व्यापक आख्यान है। उपन्यास में समुद्र तटीय समाज की आर्थिक विषमता, धार्मिक विश्वास, जातिगत संरचना, स्त्री-पुरुष संबंध तथा स्त्री की नैतिकता को लेकर निर्मित सामाजिक धारणाओं का मार्मिक चित्रण किया गया है। करूतम्मा, परीकुट्टी और पलनी की त्रासदी के माध्यम से लेखक यह दिखाते हैं कि किस प्रकार व्यक्ति का निजी जीवन सामुदायिक मान्यताओं और सामाजिक नियंत्रण से प्रभावित होता है। प्रस्तुत शोध आलेख में उपन्यास के सामाजिक, आर्थिक एवं स्त्री-विमर्श संबंधी पक्षों का विश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द : मछुआरा समाज, संघर्ष, स्त्री, रूढ़िवादिता, समुद्र, सामाजिक मान्यता, करूतम्मा, परीकुट्टी।

प्रस्तावना

भारतीय समाज विविध जातियों, समुदायों, व्यवसायों और सांस्कृतिक परंपराओं से निर्मित समाज है। प्रत्येक समुदाय का अपना विशिष्ट जीवन-संघर्ष, विश्वास और सामाजिक ढाँचा होता है। समुद्र तट पर निवास करने वाला मछुआरा समाज भी भारतीय सामाजिक संरचना का एक ऐसा ही महत्वपूर्ण समुदाय है, जिसका जीवन प्रकृति और समुद्र से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। समुद्र उसके लिए केवल आजीविका का साधन नहीं, बल्कि जीवन, विश्वास, भय और आस्था का केंद्र भी है। तकषी शिवशंकर पिल्लै का उपन्यास 'मछुआरे' इसी समुद्र तटीय समाज की जीवन-स्थितियों को केंद्र में रखता है। उपन्यास का महत्व इस बात में है कि यह केवल मछली पकड़ने वाले लोगों की आर्थिक कठिनाइयों का वर्णन नहीं करता, बल्कि उनके सामाजिक जीवन में व्याप्त अंधविश्वासों, रूढ़ियों और नैतिक मान्यताओं को भी उद्घाटित करता है। विशेष रूप से स्त्री के चरित्र को पुरुष के जीवन और उसकी सुरक्षा से जोड़ने वाली सामाजिक मान्यता उपन्यास का केंद्रीय प्रश्न बनकर उभरती है।

'मछुआरे' में चित्रित समाज का जीवन निरंतर संघर्ष से भरा हुआ है। समुद्र से जीविका प्राप्त करने वाला व्यक्ति प्रतिदिन जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष करता है। उसकी आर्थिक समृद्धि का आधार जाल और नाव है। जिस प्रकार भारतीय कृषक के लिए भूमि और पशुधन आर्थिक स्थिरता के प्रतीक हैं, उसी प्रकार मछुआरे के लिए नाव और जाल स्वतंत्र जीवन तथा संपन्नता के प्रतीक हैं। नाव और जाल होने का अर्थ है किसी दूसरे के अधीन कार्य न करना। उपन्यास का पात्र चेम्पन कुंज अपनी आर्थिक स्थिति को बदलने और स्वयं की नाव तथा जाल का स्वामी बनने का सपना देखता है। उसका यह स्वप्न केवल व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा नहीं है, बल्कि उस समाज की आर्थिक आकांक्षा का प्रतिनिधित्व करता है। किंतु आर्थिक उन्नति की इच्छा के साथ उसके चरित्र में नैतिक परिवर्तन भी दिखाई देता है। धन प्राप्त करने के बाद वह संबंधों और नैतिक दायित्वों की उपेक्षा करने लगता है। इस प्रकार उपन्यास आर्थिक उन्नति और नैतिक पतन के अंतर्संबंधों को भी प्रस्तुत करता है।

स्त्री की पवित्रता और सामाजिक नियंत्रण

उपन्यास का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष स्त्री के चरित्र को लेकर निर्मित सामाजिक मान्यता है। मछुआरा समाज में यह विश्वास प्रचलित है कि समुद्र में गए पुरुषों की सुरक्षा तट पर रहने वाली स्त्रियों की पवित्रता और निष्ठा पर निर्भर करती है। चक्की अपनी बेटी करूतम्मा से कहती है– "तट पर उनकी स्त्रियों के पवित्रता से रहने से ही यह होता है। वह पवित्रता का पालन न करें तो मल्लाह नाव सहित भंवर में पड़कर खत्म हो जाए। मछुआरों का जीवन वास्तव में तट पर रहने वाली उनकी स्त्रियों के हाथ में ही है।"[1] यह कथन केवल धार्मिक विश्वास का परिचायक नहीं है, बल्कि पितृसत्तात्मक समाज द्वारा स्त्री के शरीर और चरित्र पर स्थापित नियंत्रण को भी स्पष्ट करता है। पुरुष की सुरक्षा और परिवार की प्रतिष्ठा का संपूर्ण दायित्व स्त्री पर डाल दिया जाता है। इस प्रकार स्त्री की व्यक्तिगत इच्छा और स्वतंत्रता को सामाजिक मर्यादा के नाम पर नियंत्रित किया जाता है। करूतम्मा के पिता का कथन–"बिटिया तुझे अपनी मर्यादा की रक्षा करनी है।"[2]–भी इसी सामाजिक व्यवस्था को रेखांकित करता है। स्त्री की मर्यादा को केवल उसकी व्यक्तिगत गरिमा नहीं, बल्कि परिवार और समुदाय की प्रतिष्ठा से जोड़ दिया गया है। फलतः स्त्री का निजी जीवन सामाजिक निगरानी का विषय बन जाता है।

करूत्तम्मा का अंतर्द्वंद्व और आधुनिक चेतना

करूत्तम्मा उपन्यास की केंद्रीय पात्र है। उसके चरित्र में परंपरा और आधुनिक चेतना का संघर्ष दिखाई देता है। वह प्रेम करती है, अपनी इच्छाओं को समझती है और स्वतंत्र जीवन की आकांक्षा रखती है, किंतु सामाजिक संस्कार और परंपराएँ उसे अपने घेरे में बाँधे रखती हैं। लेखक लिखते हैं–

"उस कोठरी का कमजोर दरवाज़ा खोला जा सकता था। वह टूट कर गिर भी सकता था लेकिन करूत्तम्मा थी भी ऐसे घेरे के भीतर, जिसकी दीवार किसी तरह तोड़ी नहीं जा सकती थी।"[3] यहाँ बाहरी और भीतरी बंधनों का अत्यंत प्रभावशाली रूपक उपस्थित है। भौतिक दीवारों को तोड़ा जा सकता है, लेकिन धर्म, परंपरा, सामाजिक मर्यादा और संस्कारों से निर्मित मानसिक दीवारों को तोड़ना अत्यंत कठिन है। करूत्तम्मा का संघर्ष इसी अदृश्य सामाजिक घेरे के विरुद्ध है। वह परीकुट्टी से प्रेम करती है, किंतु परिवार और समाज की मर्यादा के कारण उसका विवाह पलनी से हो जाता है। विवाह के बाद भी उसका अतीत उसका पीछा नहीं छोड़ता। वह अपने अतीत को छिपाकर नहीं, बल्कि उससे मुक्त होकर जीवन जीना चाहती है। इस दृष्टि से करूत्तम्मा का चरित्र बदलती हुई स्त्री चेतना का प्रतिनिधित्व करता है।

प्रेम, धर्म और सामाजिक विभाजन

करूत्तम्मा और परीकुट्टी का प्रेम केवल दो व्यक्तियों का प्रेम नहीं है। यह सामाजिक और धार्मिक सीमाओं से टकराने वाला प्रेम है। उनका संबंध उन सामाजिक व्यवस्थाओं को चुनौती देता है जो व्यक्ति की पहचान को धर्म, समुदाय और परंपरा के आधार पर निर्धारित करती हैं। परीकुट्टी सच्चे प्रेम के कारण आर्थिक और मानसिक दोनों स्तरों पर टूट जाता है। उसके पास न धन बचता है और न करूत्तम्मा का साथ। दूसरी ओर करूत्तम्मा भी अपने निर्णयों के परिणामों से मुक्त नहीं हो पाती। उसका प्रेम और उसका वैवाहिक जीवन दोनों संघर्षपूर्ण बन जाते हैं। उपन्यास यह प्रश्न उठाता है कि क्या व्यक्ति को अपने जीवन का निर्णय स्वयं करने का अधिकार है? यदि है, तो समाज उस अधिकार को स्वीकार क्यों नहीं करता? यही प्रश्न उपन्यास को केवल प्रेम-कथा न रहने देकर एक व्यापक सामाजिक आख्यान बना देता है।

स्त्री-पुरुष के लिए अलग-अलग नैतिक मानदंड

मछुआरा समाज में स्त्री और पुरुष के लिए नैतिकता के अलग-अलग मानदंड निर्धारित हैं। पुरुष को अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है, जबकि स्त्री की इच्छा, प्रेम और जीवन को सामाजिक मर्यादा के अधीन रखा जाता है। लेखक कहते हैं– "नीकुन्नम-घर में चक्की की और तृक्कून्नम घर में करूत्तम्मा की इच्छाओं का महत्व नहीं।"[4] यह कथन स्त्री की इच्छाओं के दमन की सामाजिक व्यवस्था को स्पष्ट करता है। स्त्री का जीवन स्वयं उसका नहीं रहता, बल्कि परिवार और समाज की आवश्यकताओं के अनुसार निर्धारित किया जाता है।

उपन्यास में यह भी कहा गया है कि - "जमाना बदलता है लेकिन समुद्र के नियमों में कोई परिवर्तन नहीं होता है।"[5] यह कथन प्रतीकात्मक रूप से उस समाज की जड़ता को व्यक्त करता है, जहाँ बाहरी दुनिया बदल रही है, किंतु स्त्री के संबंध में सामाजिक मान्यताएँ बदलने को तैयार नहीं हैं। आधुनिकता का प्रभाव समाज के अनेक क्षेत्रों में दिखाई देता है, लेकिन स्त्री की स्वतंत्रता के प्रश्न पर परंपरा अब भी प्रभावशाली बनी रहती है।

सामाजिक बहिष्कार और सामूहिक हिंसा

करूत्तम्मा को उसके अतीत के कारण समाज द्वारा संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। उसके चरित्र पर आरोप लगाए जाते हैं और उसे सामाजिक रूप से अलग करने का प्रयास किया जाता है। इसका प्रभाव केवल करूत्तम्मा पर नहीं पड़ता, बल्कि उसके पति पलनी को भी भुगतना पड़ता है। यह दर्शाता है कि समाज व्यक्ति के कथित अपराध की सजा केवल उसे नहीं, बल्कि उसके पूरे परिवार को देता है। स्त्री के चरित्र से जुड़े आरोप सामूहिक बहिष्कार का माध्यम बन जाते हैं। यह बहिष्कार सामाजिक हिंसा का एक रूप है। समाज स्त्री और पुरुष दोनों को दंडित करता है, किंतु इस व्यवस्था का मूल केंद्र स्त्री का शरीर और उसका चरित्र ही होता है। इस दृष्टि से उपन्यास यह दिखाता है कि कलंक की संस्कृति किसी एक व्यक्ति तक सीमित नहीं रहती। वह पूरे परिवार और समुदाय को प्रभावित करती है। सामाजिक प्रतिष्ठा की रक्षा के नाम पर व्यक्ति की स्वतंत्रता और मानवीय संवेदना दोनों का दमन किया जाता है।

समुद्र : प्रकृति और सामाजिक मिथक

उपन्यास में समुद्र केवल प्राकृतिक शक्ति नहीं है, बल्कि वह सामाजिक विश्वासों का भी केंद्र है। मछुआरों का जीवन समुद्र पर निर्भर है, इसलिए उसके संबंध में अनेक मिथक और मान्यताएँ विकसित हुई हैं। स्त्री की पवित्रता और पुरुष की समुद्री सुरक्षा के बीच स्थापित संबंध भी इसी प्रकार की मान्यता है। पलनी जब समुद्र में संकट में फँसता है, तब उसके मन में करूत्तम्मा और उसकी निष्ठा का विचार आता है। उसे विश्वास होता है कि यदि उसकी पत्नी पवित्र है तो वह समुद्र के संकट से बच जाएगा। लेकिन प्रकृति सामाजिक मान्यताओं के अनुसार कार्य नहीं करती। समुद्र का तूफान किसी स्त्री के चरित्र पर निर्भर नहीं है। यहीं उपन्यास की सबसे महत्वपूर्ण विडंबना सामने आती है। प्रकृति और समाज के बीच निर्मित संबंध वास्तविकता नहीं, बल्कि मानव निर्मित विश्वास है। उपन्यास के अंत में पलनी का समुद्र में समाप्त होना तथा करूत्तम्मा और परीकुट्टी का आलिंगनबद्ध शव मिलना एक ओर

सामाजिक विश्वासों को पुष्ट करता हुआ प्रतीत होता है, तो दूसरी ओर रूढ़िवादी नैतिकता पर गंभीर प्रश्न भी खड़ा करता है। करूतम्मा और परीकुट्टी का अंतिम आलिंगन इस बात का प्रतीक है कि सामाजिक व्यवस्था उनके प्रेम को स्वीकार न कर सकी, किंतु मृत्यु के बाद भी उनका संबंध समाप्त नहीं हुआ। इस अर्थ में उनका प्रेम रूढ़ियों की पराजय और मानवीय भावनाओं की अंतिम अभिव्यक्ति बन जाता है।

उपन्यास की सामाजिक प्रासंगिकता

'मछुआरे' की कथा भले ही केरल के समुद्र तटीय समाज से संबंधित है, किंतु इसके प्रश्न केवल दक्षिण भारतीय समाज तक सीमित नहीं हैं। स्त्री की स्वतंत्रता, प्रेम पर सामाजिक नियंत्रण, धर्म और जाति के आधार पर संबंधों का विरोध, आर्थिक असमानता तथा सामाजिक बहिष्कार जैसी समस्याएँ भारतीय समाज के व्यापक संदर्भ में आज भी प्रासंगिक हैं। उपन्यास यह सिद्ध करता है कि भाषा और भौगोलिक क्षेत्र भिन्न होने पर भी मनुष्य के संघर्षों में समानता होती है। समाज बदलता है, तकनीक बदलती है और जीवन की परिस्थितियाँ बदलती हैं, किंतु सामाजिक रूढ़ियाँ अक्सर लंबे समय तक बनी रहती हैं। विशेष रूप से स्त्री के संबंध में समाज की नैतिक दृष्टि आज भी अनेक रूपों में सक्रिय है।

निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि तकषी शिवशंकर पिल्लै का 'मछुआरे' मछुआरा समाज के जीवन का अत्यंत संवेदनशील और यथार्थपरक दस्तावेज है। यह उपन्यास केवल समुद्र से जीविका चलाने वाले लोगों की आर्थिक कठिनाइयों को प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि उनके सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन की जटिलताओं को भी उद्घाटित करता है। करूतम्मा के माध्यम से स्त्री की स्वतंत्रता और सामाजिक बंधनों का संघर्ष सामने आता है; परीकुट्टी के माध्यम से प्रेम की त्रासदी और सामाजिक विभाजन का प्रश्न उभरता है; पलनी के माध्यम से अंधविश्वास और पुरुष की असुरक्षा का चित्रण होता है; जबकि चेम्पन कुंज के चरित्र में आर्थिक आकांक्षा और नैतिक विघटन दिखाई देता है।

इस प्रकार 'मछुआरे' एक ऐसे समाज का आख्यान है जिसमें व्यक्ति अपने अस्तित्व के लिए प्रकृति से भी संघर्ष करता है और समाज से भी। उपन्यास का मूल संदेश यही है कि मनुष्य का जीवन केवल प्राकृतिक शक्तियों से नियंत्रित नहीं होता, बल्कि सामाजिक मान्यताएँ, रूढ़ियाँ और सामूहिक विश्वास भी उसके जीवन की दिशा निर्धारित करते हैं। स्त्री के चरित्र को केंद्र में रखकर रचा गया यह उपन्यास पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना की आलोचना करता है और बदलते समाज में व्यक्ति की स्वतंत्रता की आवश्यकता को रेखांकित करता है। यही कारण है कि 'मछुआरे' आज भी सामाजिक संघर्ष और मानवीय संवेदना का एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास बना हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पिल्लै, तकषी शिवशंकर. मछुआरे. अनुवाद : भारती विद्यार्थी. नई दिल्ली : साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण 1954, पुनर्मुद्रण 2014, पृ. 8
2. वही, पृ. 12
3. वही, पृ. 10
4. वही, पृ. 106
5. वही, पृ. 123